## मनसबदारी व्यवस्था

मनसबदारी व्यवस्था एक विशिष्ट प्रशासनिक व्यवस्था थी जो मुग़ल साम्राज्य की सैन्य व नागरिक सेवाओं तथा मुग़लकालीन अमीर वर्ग 'उमरा' के संगठन का मूल आधार थी जिसका प्रचलन अकबर द्वारा किया गया था।[59] इस युग में 'मनसब' शब्द अपने आप में किसी पदाधिकार का द्योतक नहीं था, अपितु इसके पदधारी की स्थिति का निर्धारक होने के साथ-साथ उसके उत्तरदायित्व और वेतन को नियत करता था। प्रत्येक मनसबदार को दो संख्याएं दी जाती थीं जिन्हें "जात" और "सवार" कहते थे। इनके आधार पर पदधारी पर यह उत्तरदायित्व डाला जाता था कि वह एक निश्चित संख्या में फौज के साथ-साथ रिसाले अर्थात घोड़ों और आवश्यक साजो-सामान का रख-रखाव करे। मनसबदारों को वेतन का भुगतान या तो नकद होता था अथवा अन्य सुविधाओं के माध्यम से होता था। जिन्हें नकद वेतन मिलता था वे "नकदी" कहलाते थे तथा अन्य "जागीरदार" या "तुयुलदार" होते थे। वेतन के अतिरिक्त बादशाह उन्हें पदवियां, सनद, पोशाकें, इनाम या भेंट इत्यादि बक्श कर सम्मानित भी करते थे।

मनसब का शाब्दिक अर्थ 'वह स्थान जहां कुछ रखा अथवा बनाया जाता है' है। फारसी भाषा में इसका अर्थ ओहदा, अरबी में स्थान तथा अंग्रेजी में पद Rank होता है।[60] अतः प्रायः उसकी व्याख्या 'पद' के रूप में की जाती है क्योंकि इसका उद्देश्य पदधारी की प्रशासनिक पदसोपान में अवस्थिति और

वेतन का निर्धारण था। इसका यह भी अर्थ था कि प्रत्येक मनसबधारी राज्य का कर्मचारी अथवा अधिकारी था और वेतन के बदले राज्य की सेवा-नागरिक अथवा सैनिक-करने के लिए अनुबंधित था। मुग़ल साम्राज्य के उच्च पदाधिकारी, जिन्हें शाही सेवा में पद मिला होता था, मनसबदार कहलाते थे। अब्दुल अज़ीज का मत है कि मनसबदारी एक सर्वव्यापक व्यवस्था बन गई थी जिसमें 'सेना, पुरोहित अथवा धार्मिक वर्ग और नागरिक प्रशासन सब समाहित थे।'[61]

मध्ययुगीन भारत की राज्य व्यवस्था में सशस्त्र सेनाओं का विशेष महत्व होने के बावजूद केंद्रीकृत सेना की अवधारणा का विकास नहीं हो पाया था। परिणामस्वरूप केंद्रीय शासन को अपने अधीनस्थ भू-प्रदेश की सुरक्षा और वहां विधि-व्यवस्था बनाए रखने के लिए उन प्रादेशिक अधिकारियों अथवा सरदारों पर निर्भर रहना पड़ता था जिनके अंतर्गत सशस्त्र सैन्य टुकड़ियां रहती थीं। ये सेनानायक राज्य को दी जाने वाली सैन्य सेवाओं के बदले में वेतन अथवा भू-प्रदेशों पर अधिकार प्राप्त करते थे जिन्हें सल्तनत काल में 'अक्ता' व्यवस्था के नाम से जाना जाता था। इस व्यवस्था में सेनानायकों अथवा अक्तादारों की सशस्त्र टुकड़ियों और उनको दिए जाने वाले वेतन अथवा अनुदान के बीच कोई तालमेल नहीं था क्योंकि ऐसा किसी विशिष्ट नियम अथवा व्यवस्था के अंतर्गत निर्धारित न होकर बादशाह की इच्छा पर निर्भर था। परिणामस्वरूप, धीरे-धीरे केंद्रीय शासक की आय और सत्ता क्षीण होती जाती थी और अक्तादार अथवा प्रांतीय सेनानायक अपने-अपने क्षेत्रों में अत्यंत शक्तिशाली हो जाते थे।

अकबर के सत्ता संभालने से पहले अधिकारियों को जागीर दी जाती थी। जागीरदार अपने-अपने अधिकार क्षेत्र में राजा की हैसियत रखते थे। वे मनमाने ढंग से भूमिकर वसूल करते थे और साम्राज्य के कोष में बहुत कम मात्रा में धन-राशि जमा करते थे। सम्राट को युद्ध के समय कुशल सेना भी नहीं दे पाते थे क्योंकि उनके पास स्थायी सेनाएं होती ही नहीं थीं। सम्राट द्वारा सेना सहित बुलाए जाने पर ये जागीरदार किराए के सैनिक एकत्रित करके शाही सेवा में पहुंच जाते थे परंतु ये सैनिक केवल आंशिक तौर पर सहायक सिद्ध होते थे

क्योंकि न तो उनके पास अच्छे अस्त्र शस्त्र थे और न ही वे उनके प्रयोग में प्रशिक्षित होते थे। साथ ही, युद्ध के पश्चात जागीरदार थोड़े से सैनिक रख लेते थे और शेष को मुक्त कर देते थे। एक कुशल सेना के अभाव और जागीरदारों के कुप्रबंध का अहसास अकबर को गुजरात अभियान के दौरान सर्वाधिक हुआ और उसके पश्चात (1573-74 ई.) के मध्य उसने मनसबदारी प्रथा को कार्यरूप में परिणत किया।[62]

अकबर के पूर्ववर्ती मुग़ल शासकों के सैन्य अथवा प्रशासनिक संगठन के विषय में कोई विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं है। ऐसे संकेत मिलते हैं कि बाबर के नेतृत्व में मुग़लों द्वारा उत्तरी भारत की विजय के समय (1526 ई.) तक मुग़ल शासकों को प्रशासनिक संस्थाओं की पुनर्व्यवस्था के सुदृढ़ीकरण का अवसर नहीं मिला। बाबर अपने आक्रमणों और विजयों में व्यस्त रहा जबकि हुमायूं राजनीतिक अस्थिरता की समस्याओं में उलझा रहा। हुमायूं के काल में अमीरों के वर्गीकरण के प्रयास के उल्लेख अवश्य मिलते हैं परंतु सैन्य संख्या के आधार पर पदों के निरूपण के संदर्भ नहीं मिलते। उसने अपने अमीरों के 12 वर्ग बनाए थे जिसमें बादशाह से लेकर दरबान तक हर छोटा-बड़ा अधिकारी, कर्मचारी, सैयद व विद्वान सभी वर्गीकृत थे[63] अतः ऐसा प्रतीत होता है कि उक्त वर्गीकरण सैनिक दस्ते की क्षमता या संख्या के आधार पर नहीं किया गया था।

परिणामस्वरूप अकबर को एक अस्त-व्यस्त प्रशासनिक व्यवस्था ही विरासत में मिली जिसमें न तो राजस्व की समरूपता थी और न ही विभिन्न क्षेत्रों के शासन की प्रशासनिक नीतियों तथा व्यवस्था की। ऐसी कोई व्यवस्था भी विकसित नहीं हो सकी थी जिससे सेना की सशस्त्र टुकड़ियों के आकार व संख्या पर नियंत्रण रखा जा सकता। राज्य अधिकारियों की भर्ती, नियुक्ति आदि के संबंध में भी कोई नियम निर्धारित नहीं थे। अनेकशः जागीर पहले प्रदान की जाती थी तथा उससे होने वाली आय के अनुपात में सशस्त्र टुकड़ियों की संख्या बाद में निश्चित कर दी जाती थी। 1558 में मुहम्मद अतका खां को एक करोड़ तक की

आय की जागीर प्रदान किए जाने के दृष्टांत से अकबर के शासन-काल के प्रारंभिक वर्षों की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है।

अकबर के शासनकाल के ग्यारहवें वर्ष में मनसब प्रदान किए जाने का प्रथम संदर्भ प्राप्त होता है। उसने यह अनुभव किया था कि एक सशक्त व सुव्यवस्थित केंद्रीय प्रशासन की स्थापना के लिए सुस्पष्ट नियमों पर आधारित एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था आवश्यक थी जिसमें अमीर (उमरा) वर्ग को अपनी अधीनस्थ स्थिति तथा शासन के प्रति अपने उत्तरदायित्व का बोध हो तथा प्रशासनिक पदों पर नियुक्ति तथा पदोन्नति के लिए व्यक्ति की योग्यता तथा कार्य-कुशलता को प्राथमिकता दी जाए। इसके लिए अकबर ने आरंभ में तत्कालीन प्रचलित जागीरदारी व्यवस्था को ही आधार बना कर उसमें क्रमिक परिवर्तन व सुधार किए जिससे 1566-75 के दशक में मनसबदारी व्यवस्था का विकास हुआ। यद्यपि 'मनसब' शब्द का प्रयोग प्राक्-अकबर युग और सल्तनत काल में भी यदा-कदा मिलता है परंतु इसका प्रयोग व्यवस्थित रूप से अधिकारियों के पद क्रम के संदर्भ में नहीं मिलता जो अकबर ने प्रारंभ किया। यह व्यवस्था अकबर द्वारा प्रारंभ किए गए राजस्व-सुधारों से भी निकट से जुड़ी थी।

अपने शासन के ग्यारहवें वर्ष (1565 ई.) में अकबर ने 'जमा रकमी कलामी' अर्थात जागीरों का काल्पनिक आकलन समाप्त कर दिया तथा अफसरों का वेतन सैनिक दस्तों की संख्या को नियत करते हुए उन्हें तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर दिया।[64] 1573 में इस व्यवस्था में घोड़ों को दागने और सैनिकों के चेहरे के विवरण पर आधारित तालिकाओं का प्रावधान भी प्रारंभ किया गया।[65] श्रेणियों में संशोधन कर दहभाषी (दस घोड़ों का नायक) से पंचहज़ारी (5000 का नायक) तक के पद प्रदान किए गए। पंचहजारी से ऊपर के पद अथवा मनसब शहज़ादों के लिए सुरक्षित रखे गए थे। अबुल फज़ल के अनुसार 1566 में अकबर ने साम्राज्य के सभी मनसबदारों के लिए निश्चित संख्या में सैनिक रखना अनिवार्य कर दिया तथा सैनिकों को तीन वर्गों में विभाजित कर उनके

वेतन निश्चित किए।[66] इस प्रकार मनसब का अर्थ पद या श्रेणी था और इससे मुगल प्रशासनिक पद-सोपान में किसी अधिकारी या अमीर की अवस्थिति का बोध होता था।[67] इस व्यवस्था के मूल तत्वों व विकास क्रम का व्यवस्थित अध्ययन सर्वप्रथम मोरलैंड तथा अब्दुल अज़ीज़ द्वारा किया गया और उनके अध्ययन का आधार मुग़लकालीन ग्रंथ जैसे अबुल फज़ल का अकबरनामा व आइने अकबरी, अब्दुल हमीद लाहौरी का पादशाहनामा, मुहम्मद काज़िम का आलमगीरनामा, मुहम्मद साकी मुस्तअिद खां का मासिर-ए-आलमगिरी, बाबर और जंहागीर के संस्मरण, तथा बदांयूनी, निज़ामुद्दीन अहमद व अली मुहम्मद खां के ग्रंथ हैं। मुग़ल प्रशासन व सेना पर किए गए अन्य अध्ययन भी इस व्यवस्था पर कुछ प्रकाश अवश्य डालते हैं। इन ग्रंथों की व्याख्या के आधार पर विभिन्न मध्यकालीन इतिहासकारों ने मनसबदारी प्रथा के प्रारंभ, अर्थ व विकास पर भिन्न-भिन्न मत प्रकट किए हैं जिनका अच्छा विश्लेषण अनिल रावत के ग्रंथ में मिलता है।

मोरलैंड और अब्दुल अज़ीज़ का मत है कि एकल संख्यात्मक पद के रूप में मनसब का प्रयोग अकबर के समय के पहले से प्रचलित था। इससे घुड़सवार दस्ते की उस संख्या का ज्ञान होता था जो किसी अधिकारी के लिए रेखना अपेक्षित था। अतः जब मोरलैंड को अकबर के शासन के ग्यारहवें वर्ष में सैनिक दस्ते के वेतन की अदायगी के लिए तीन विशिष्ट श्रेणियों का संदर्भ मिला तो उन्होंने इस सूचना को तृतीय या सवार पद के प्रचलन का सूचक माना। इस आधार पर मोरलैंड ने यह मत व्यक्त किया कि अकबर ने अपने शासन काल के ग्यारहवें वर्ष में सवार पद का प्रचलन किया जिससे घुड़सवार दस्ते की संख्या का बोध होता था जबकि प्रथम अर्थात ज़ात से व्यक्ति के वेतन तथा पद सोपान में अवस्थिति का ज्ञान होता था।[68]

अब्दुल अज़ीज का भी मानना है कि ज़ात पद से एक निश्चित संख्या में हाथी, घोड़े तथा अन्य ऐसे ही साधनों को रखने की अपेक्षा का संकेत मिलता है जबकि सवार से वास्तविक घुड़सवार दस्तों की संख्या का बोध होता है।[69] उसी प्रकार इरविन और उनका अनुसरण करते हुए स्मिथ का यह मत है कि ज़ात मनसबदार के व्यक्तिगत पद सोपान में क्रम का सूचक शब्द था तथा उसके अधीन संपूर्ण सैनिक दस्तों की ओर भी संकेत करता था जबकि सवार उन अतिरिक्त घुड़सवारों की ओर संकेत करता था जिनके लिए मनसबदार अतिरिक्त राशि प्राप्त करता था।[70]

परंतु ए.जे. कैसर ने आइने अकबरी तथा तबकाते अकबरी में उल्लिखित मनसबदारों की सूची के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर यह विचार व्यक्त किया है कि ज़ात और सवार दोनों का ही प्रचलन एक साथ अकबर के शासन के अठारहवें वर्ष यानी 1573-74 में किया गया तथा इनका उद्देश्य मुग़ल प्रशासनिक सेवा में अमीरों के पदानुक्रम तथा अवस्थिति का बोध कराना था।[71] इरफान हबीब भी अप्रत्यक्षतः इस मत को स्वीकार करते प्रतीत होते हैं।[72]

जबकि कुरैशी का मानना है कि 'सवार' का मनसब मानसूचक था जिससे मनसबदार को अश्वारोही रखे बिना ही अधिक वेतन प्राप्त होता था।[73]

उनसे भिन्न शिरीन मूसवी का मत है कि उपलब्ध साक्ष्यों से ज़ात तथा सवार दोनों ही के एक साथ प्रचलित किए जाने के तथ्य की पुष्टि नहीं होती।[74] ऐसा मत उन्होंने मनसब व्यवस्था से संबंधित विविध विवरणों व उद्धरणों के अध्ययन के आधार पर प्रकट किया है। विशेष तौर पर बदायूंनी के मुन्तखव उत तवारीख तथा मुअतमिद खां के इकबाल-नामा-ए-जहांगीरी में प्राप्त विवरण

के आधार पर मूसवी ने यह सिद्ध करने का प्रयास किया है कि ए.जे. क़ैसर का मत कि अकबर के शासन के पूर्व या प्रारंभिक वर्षों में संख्या के आधार पर पदों का निरूपण करने की प्रथा प्रचलित नहीं थी, साक्ष्यों पर आधारित नहीं है। मूसवी का मानना है कि बदायूंनी तथा मुअतमिद खां के ग्रंथों से यह प्रमाण मिलते हैं कि उस काल में केवल एक ही पद प्रचलित था। चूंकि तब तक पदोन्नति घुड़सवारों की अपेक्षित संख्या रखे जाने के आधार होती थी अतः मनसब प्राप्त करने वाले का पद एकल संख्या द्वारा जाना जाता था जैसे सदी यानी (सौ सैनिकों का नायक), पंचसदी (पांच सौ सैनिकों का नायक), हज़ारी (हज़ार सैनिकों का नायक) तथा पंचहजारी (पांच हजार सैनिकों का नायक) इत्यादि। इस प्रकार इस काल में मनसब केवल अमीर के मातहत सैनिकों की संख्या से ही जाना जाता था जिससे सवार पद का ही बोध होता है। युगल पदों का प्रचलन अभी नहीं हुआ था।

डगलस स्त्रेसां भी मूसवी के मत का समर्थन करते हुए यह मत व्यक्त करते हैं कि मनसब की आवश्यकता और वास्तविक सैनिकों/घोड़ों की टुकड़ियों की संख्या के बीच निरंतर विसंगतियों के परिणामस्वरूप 1596-97 ई. में ज़ात और सवार के पदों का विभेदीकरण प्रारंभ हुआ।[75]

जात और सवार अलग-अलग शब्दों से मनसब को अंकित करने से यह संकेत मिलता है कि इनका प्रयोग भिन्न अर्थों में किया गया है किंतु इतिहासकारों में इनके अर्थ के विषय में मतभेद है।

विलियम इर्विन का विचार है कि सवार पद एक अतिरिक्त सम्मान था तथा प्राप्तकर्ता को ज़ात से सूचित संख्या के अतिरिक्त सवार पद की संख्या से सूचित सैनिक भी रखने पड़ते थे।[76]

रामप्रसाद त्रिपाठी का मत है कि ज़ात मनसब के आधार पर सैनिक रखने पड़ते थे और सवार मनसब के आधार पर मनसबदार को भत्ता मिलता था जो दो रुपए प्रति सवार था। इस प्रकार यदि किसी मनसबदार को 2000 सवार

मनसब प्राप्त होता था तो उसे ज़ात के आधार पर वेतन के साथ 2000 सवार का 4000 रुपए का अतिरिक्त भत्ता भी दिया जाता था।[77]

सी.एस.के. राव के अनुसार ज़ात पैदल और सवार घुड़सवार सैनिकों की संख्या की ओर संकेत करते हैं।[78]

अब्दुल अज़ीज का मत है कि ज़ात मनसब एक निश्चित संख्या में हाथी,घोड़े, भारवाहक पशु और गाड़ियां रखने का द्योतक था। सवार मनसब इसका सूचक था कि वास्तव में मनसबदार को कितने घोड़े रखने होंगे। इसके लिए उसे अतिरिक्त धन प्राप्त होता था।[79]

कुरैशी का मानना है कि सवार का मनसब मानसूचक था और इससे मनसबदार को अश्वारोही रखे बिना ही अधिक वेतन प्राप्त होता था।[80]

मोरलैंड का मत है कि अकबर के समय जब 'सवार' मनसब प्रारंभ हुआ, उस समय 'ज़ात' को मानसूचक तथा वेतन का मापदंड स्वीकार किया गया और 'सवार' मनसब वास्तविक संख्या में रखे जाने वाले घुड़सवार सैनिकों का द्योतक था।[81]

अबुल फजल के *अकबरनामा* से यह जानकारी मिलती है कि 1594 में सलीम को 12000 ज़ात के अतिरिक्त 10,000 सवार का मनसब प्रदान किया गया था।[82] यह अकबर के समय में 'सवार' मनसब का प्रथम उल्लेख है जिसे पश्चातवर्ती दो वर्षों में एक व्यवस्था का रूप देते हुए 1596 तक श्रेणीबद्ध कर दिया गया। इन श्रेणियों का आधार ज़ात व सवार पदों की द्वैधता थी। 5000 से नीचे के मनसबदारों में प्रथम श्रेणी का मनसबदार वह था जिसके पास 1000 'सवार' का पद भी हो। द्वितीय श्रेणी का 1000 का मनसबदार वह था जिसके

पास 500 सवार का पद था और तृतीय श्रेणी का 1000 का मनसबदार वह था जिसका 100 सवार का पद था।[83] 1602 से 1605 ई. तक अकबर ने 37 मनसबदारों को 'सवार' मनसब प्रदान किया जिससे यह जाना जा सकता है कि इस समय तक द्वैध मनसब ('ज़ात' और 'सवार') का प्रचलन हो चुका था।[84]

उपरोक्त विवरण से यह समझा जा सकता है कि 'ज़ात' मनसब लोक प्रशासन में मनसबदार के पद एवं स्थान का सूचक था जबकि 'सवार' मनसब के आधार पर उसे अश्वारोही सैनिक रखने होते थे।[85] किंतु मनसबदार निश्चित संख्या में अश्वारोही नहीं रखते थे अतः सम्राट की ओर से नए नियम बनाए व लागू किए जाते थे। अकबर ने उन्हें निश्चित संख्या में अश्वारोही रखने के लिए विवश किया था परंतु बाद में पूरे सवार संख्या के घुड़सवार नहीं रखे जाते थे। जहांगीर के समय में व्यवस्था काफी ढीली हो गई और शाहजहां के समय तक मनसबदारों के अश्वारोहियों की संख्या 'सवार' मनसब के चौथाई से भी कम हो गई थी। अतः सेना दुर्बल होती गई। तब शासन के बीसवें वर्ष में शाहजहां ने कुछ नियम बनाए।[86] इन नियमों के अनुसार यदि मनसबदार उस क्षेत्र में नियुक्त हो जहां उसकी जागीर हो तो उसे अपने सवार मनसब का 1/3, यदि अन्यत्र नियुक्त हो तो 1/5 अश्वारोही रखने पड़ेंगे। जिन मनसबदारों को नकद वेतन मिलता था, उन्हें भी इसी आधार पर घोड़े रखने होते थे। यही नियम औरंगजेब के समय तक चलते रहे।

उनके अतिरिक्त जो मनसब किसी शर्त के साथ निश्चित किया जाता था उसे "मश्रूत मनसब" कहते थे। जैसे यदि किसी मनसबदार को किसी ऐसे क्षेत्र में सूबेदार के पद अथवा सैनिक अभियान पर भेजा जाता जहां उसे अधिक अश्वारोहियों की आवश्यकता होती तो कुछ समय के लिए उसका मनसब कार्य

के अनुरूप बढ़ा दिया जाता था और उसके अनुसार ही उसे वेतन या जागीर दी जाती थी। फिर कार्य समाप्ति के पश्चात इस मनसब को निरस्त कर दिया जाता था या उसका कुछ भाग अथवा उसकी समकक्ष जागीर मनसबदार को प्रदान कर दी जाती थी।[87]

## वेतन

मनसबदारों को वेतन नकद अथवा जागीर के रूप में दिया जाता था। उस वेतन से ही मनसबदारों को साम्राज्य की सेवा के लिए घोड़े हाथी, भारवाहक पशु तथा सैनिक आदि रखने पड़ते थे। उन पर होने वाले व्यय के पश्चात जो धन-राशि बचती थी, वह मनसबदार की व्यक्तिगत संपत्ति होती थी। अकबर ने नकद वेतन देने की व्यवस्था रखी थी परंतु वह पूर्णतः सफल नहीं हो पाई और जहांगीर के समय में पुनः जागीर प्रथा का प्रचलन हो गया।[88] इस प्रकार वेतन का संबंध भूमि कर से था। भूमि की पैमाइश और भूमि-कर के निर्धारण में दोष रह जाने से निर्धारित मालगुजारी (जमा) और वसूल होने वाली मालगुजारी (हासिल) में अंतर आ गया था। अकबर और जहांगीर के समय इस कारण से मनसबदार परेशान थे अतः शाहजहां के शासन काल में दक्षिण का हासिल (असल आय) जमा (निर्धारित आय) का एक चौथाई था।[89] नकद वेतन में मनसबदार की नियुक्ति होने पर उसका वेतन जागीर के हासिल पर निश्चित होता था।

अकबर के उत्तराधिकारियों अर्थात पश्चातवर्ती मुग़ल बादशाहों ने मनसबदारी व्यवस्था में अनेक महत्वपूर्ण परिवर्तन किए परंतु 'ज़ात व 'सवार' पदों की मुग़ल व्यवस्था तथा इनके माध्यम से मनसबदार के दावों तथा दायित्वों का निर्धारण पहले की भांति ही होता रहा। जहांगीर के शासन काल में 'सवार' पद में संशोधन हुआ तथा दु-अस्पा, सिंह अस्पा की व्यवस्था की गई।[90] अकबर के

समय यह नियम बनाया गया था कि किसी मनसबदार का 'सवार' पद उसके 'ज़ात' पद से अधिक नहीं हो सकता। यहां उलेखनीय है कि सवारों की संख्या पर ही मनसबदारों की प्रतिष्ठा व श्रेणी निर्भर करती थी। अतः किसी मनसबदार से प्रसन्न होने पर बादशाह यदि उसकी प्रतिष्ठा में वृद्धि करना चाहता परंतु किसी कारणवश उसके ज़ात पद में वृद्धि करना संभव न होता तो दु-अस्पा और सिंह अस्पा के माध्यम से मनसबदार के 'सवार' पद में अप्रत्यक्ष रूप से वृद्धि करके उसे पुरस्कृत किया जा सकता था। इस व्यवस्था में मनसबदारों को अतिरिक्त घुड़सवारों के लिए बढ़ी हुई धनराशि का भुगतान किया जाता था तथा उसके सम्मान में भी वृद्धि होती थी।

उच्चतम मनसबदार अधिकांशतः सूबों के नाज़िम होते थे; अकबर के शासन के अंत में वे हाकिम और बाद में साहिब सूबा अथवा सूबादार कहलाए। अन्य मनसबदारों को जागीरें दी जाती थीं जिनका अकबर के बाद बहुधा हस्तांतरण होता रहता था।

## नियुक्ति व पदोन्नति

मनसबदारों की नियुक्ति सम्राट स्वयं करता था। किसको कौन सी श्रेणी दी जाए, यह नियुक्ति किए जाने वाले की परिस्थिति पर निर्भर करता था। उदाहरणार्थ, आमेर के शासक बिहारीमल को सीधे 5000 के मनसबदार की श्रेणी में रखा गया था।[91] और बाद में वहीं के राजा मानसिंह को सात हजार का मनसबदार नियुक्त किया गया था। साधारणतः मनसब 10 से प्रारंभ होता था और पांच हजार से ऊपर का मनसब शाहज़ादों को ही दिया जाता था। मनसब से मनसबदार को भारी मात्रा में धन-लाभ तो होता ही था, साम्राज्य में उसका सम्मान भी बढ़ जाता था। बड़े मनसबदारों को 50000 से 30000 रूपया मासिक तक वेतन मिलता था।[92] कभी-कभी नकद रुपया न देकर उन्हें उतने की ही जागीर शाही इलाके में दे दी जाती थी। बड़ी जागीरें मिल जाने से उनकी

आय, आदर व प्रतिष्ठा में वृद्धि होती थी। वहां कर संग्रह के लिए वे अपने लोगों को नियुक्त करते थे।

मनसबदार के पद के लिए कोई मान्य कसौटी या योग्यता नहीं थी। सम्राट अपने विवेक से ही व्यक्ति की परख कर उसे मनसबदार नियुक्त करते थे।[93] अकबर ने कूटनीति का प्रयोग करते हुए राजस्थान में छोटी रियासतों के राजाओं को भी उनकी सेवाएं देखते हुए उच्च मनसब दिए जिससे शाही दरबार के प्रति उनकी निष्ठा दृढ़ हो जाती थी। कभी-कभी राजकुमारों अथवा सेनापतियों की संस्तुति पर भी मनसब प्रदान किया जाता था। अन्यथा मनसब के इच्छुक उम्मीदवार को किसी अधिकारी के संरक्षण की तलाश करनी पड़ती थी। वह अधिकारी मनसबदारी के नए उम्मीदवार का परिचय सम्राट से करवाता था।[94] प्रायः यह कार्य मीर बख्शी करता था। साधारण तौर पर सैनिक अधिकारियों के रूप में मनसबदार मीर बख्शी के क्षेत्राधिकार में आते थे परंतु अकबर ने सर्वोच्च नियंत्रण अपने पास रखा था और मीर बख्शी को नियुक्ति, तथा नियुक्त मनसबदारों के लिए उपयुक्त स्थान, कार्य पद व वेतन की संस्तुति करने का दायित्व दिया था।

मीर बख्शी द्वारा परिचय के पश्चात यदि सम्राट को वह व्यक्ति जंच जाता तो सम्राट की स्वीकृति के उपरांत उसकी नियुक्ति के आदेश से संबंधित एक लंबी प्रक्रिया का पालन किया जाता था। संपूर्ण प्रक्रिया इस प्रकार थी : मीर बख्शी सम्राट के सम्मुख एक वक्तव्य (हकीकत) रखता था जिस पर सम्राट मनसबदारी के उम्मीदवार को अपने सम्मुख बुलवाता था। सम्राट की स्वीकृति के पश्चात बख्शी हकीकत अपने पास रख कर एक प्रमाण-पत्र (तस्दीक) जारी करता था। तस्दीक का एक हिस्सा (याददाश्त) वाकियानीगार के द्वारा तैयार किया जाता था और उस पर वज़ीर, दीवान तथा वाकियानीगार के हस्ताक्षर

होते थे। अन्ततः फरमान जारी किया जाता था जिसके आधार पर मनसबदार की नियुक्ति की जाती थी।[95]

मनसबदार की उन्नति तथा अवनति भी सम्राट की इच्छा पर निर्भर थी। जिन राजकुमारों के अधीन मनसबदार कार्य करता था, उनकी संस्तुति पर, शुभ अवसरों पर अथवा सैनिक अभियानों के प्रारंभ या अंत में मनसबदारों के मनसब में वृद्धि की जाती थी। कभी-कभी नए पद पर नियुक्ति के समय भी उनका मनसब बढ़ा दिया जाता था।

साधारण परिस्थितियों में मनसबदारों का कर्त्तव्य शाही आदेशों का पालन करना होता था। वैसे मनसबदारों की दो सूचियां थीं। एक, वह मनसबदार जो नियमित रूप से शाही दरबार में हाज़िर रह कर सम्राट के आदेशों का पालन करने के लिए तैयार रहते थे और दूसरी सूची में वे मनसबदार थे जो सैनिक अभियानों पर भेजे जाते थे तथा किसी भी प्रांत के अधिकारी बनाए जा सकते थे। उन्हें शाही विभागों, घुड़साल, नौबतखाने आदि में भी नियुक्त किया जा सकता था। वैसे किसी भी अधिकारी को किसी भी प्रकार का कार्य सौंपा जा सकता था। वस्तुतः प्रत्येक मनसबदार सीधा सम्राट के अधीन था और सम्राट जिस मनसबदार को उपयुक्त समझता उसी को कार्य विशेष के लिए नियुक्त करता था। जैसे बीरबल को शाही दरबार में बहुत समय तक रखने के पश्चात रोशनाइयों के विरुद्ध सैन्य संचालन सौंप दिया गया जिसमें उनकी मृत्यु भी हो गई।[96]

सम्राट अकबर ने पांच अधिकारी इसलिए नियुक्त किए थे ताकि वह मनसबदारों के सैनिकों, घोड़ों आदि की जांच करके वेतन भुगतान आदि की उचित व्यवस्था करें।[97] इस हेतु जो भी नया मनसबदार नियुक्त किया जाता उसे अपने सैनिकों सहित पूरा विवरण कद, रंग, स्थान आदि विवरण-पत्र में लिखवाना होता था। इस विवरण-पत्र पर ऊपरवर्णित पांचों अधिकारियों के हस्ताक्षर होते

थे। इसके पश्चात इस विवरण पत्र को देखकर निरीक्षण करने वाला दारोगा वस्तुस्थिति से मिलान करता और तब पत्र को सम्राट के सम्मुख प्रस्तुत किया जाता। सम्राट उस आधार पर मनसब में वृद्धि अथवा कमी के आदेश देता। फिर विवरणपत्र वाकियानीगार के सामने पहुंचता और उसके हस्ताक्षर हो जाने के पश्चात घोड़ों को दागा जाता।[98] यदि कोई मनसबदार समय पर अपना घोड़ा दाग और निरीक्षण के लिए प्रस्तुत नहीं करता तो उसकी जागीर का 1/10 भाग ज़ब्त कर लिया जाता था।[99] 1575 ई. से दाग प्रथा का कठोरता से पालन किया गया था तथा बहुत से मनसबदारों को दंडित भी किया गया था।

मनसबदारी को अकबर के साम्राज्य-निर्माण के प्रयासों का आधारभूत अंग मानते हुए सतीश चंद्रा लिखते हैं कि मनसबदारी व्यवस्था के माध्यम से अकबर ने अनेक विविधतायुक्त तत्वों को एक संगठित व सौहार्दपूर्ण समष्टि में बांधने का प्रयास किया ताकि कुलीन वर्ग शाही इच्छा का एक कुशल व विश्वसनीय यंत्र बन सके। अकबर की शायद यह इच्छा थी कि कुलीन वर्ग के विभिन्न नृजातीय, राष्ट्रीय और धार्मिक समूहों में ऐसा संतुलन रखा जाए कि केंद्रीय शासक राजा को उनमें से किसी एक समूह पर निर्भर न होना पड़े और कार्य की अधिकतम स्वतंत्रता भी बनी रहे।[100]

स्त्रेसां के अनुसार 'मनसबदारी व्यवस्था ने सैन्य-संरक्षणवादी राज्य (military patronage state) के पूर्वानुमानों को पूरी कुशलता के साथ संपन्न किया। इसने मुग़ल अधिकारियों को क्रमबद्ध करते हुए उन्हें गणनात्मक पद (rank) प्रदान किया। एक पद के रूप में मनसब एक ही समय पर अधिकारी का साम्राज्य के पदसोपान में स्थान, उसके सैनिक उत्तरदायित्व और वेतन सुनिश्चित कर देता था।[101] पद की संख्या वस्तुतः घुड़सवारों और घोड़ों की संख्या थी जिन्हें रखना अधिकारी का उत्तरदायित्व था।

## संगठन : मनसबों का आकार तथा मनसबदारों की संख्या

मनसबदारी प्रथा का संगठन दशमलव/दमिश्क (decimal) प्रणाली के आधार पर किया गया था। इसके अनुसार सम्राट किसी भी व्यक्ति को किसी संख्या (10, 20, 100, 500, 1000, 5000, इत्यादि) का मनसबदार नियुक्त करता था। इस आधार पर मनसबदार को राज्य से नकद या जागीर के रूप में वेतन प्राप्त होता था जिसके एवज में उसे नियमानुसार घोड़े, हाथी, बैलगाड़ियां, वाहक पशु और सैनिक रखने पड़ते थे। इनके ऊपर खर्च के पश्चात जो धन बचता था वह मनसबदार का होता था। साथ ही उसे सैनिक अथवा प्रशासनिक किसी भी पद पर कार्य करना पड़ता था।[102] इस प्रकार की दस की दस इकाइयों के ऊपर 100 घोड़ों का एक नायक होता था। दस नायकों यानी 1000 घोड़ों के ऊपर एक सेनानायक तथा दस सेनानायकों के ऊपर यानी 10,000 घुड़सवारों के ऊपर जो नायक होता था उसे तुमन कहा जाता था। अबुल फजल ने 10 घुड़सवारों से प्रारंभ कर दस हजार घुड़सवारों के बीच 6 श्रेणियां निश्चित कीं[103] जबकि उन्हीं के अनुसार मनसबदारों की श्रेणियों की वास्तविक संख्या 33 थी।[104] परंतु आई.एच. कुरैशी का मत है कि 33 श्रेणियां सैद्धांतिक थीं।[105]

राजकीय अधिकारियों की शिकायत थी कि वेतन के बदले जो जागीरें उन्हें दी जाती थी उनकी आय का निर्धारण मनमाने ढंग से बढ़ा-चढ़ा कर किया जाता था जबकि केंद्र को यह महसूस होता था कि अमीर जागीर और वेतन तो प्राप्त करते थे किंतु सैनिक और घोड़े नहीं रखते थे अतः अकबर ने अधिकारियों के लिए निश्चित संख्या में घोड़े रखना अनिवार्य कर दिया तथा 1573 में 'दाग प्रथा' की नई व्यवस्था को प्रारंभ किया जिसके अनुसार मनसबदारों के घोड़ों को दो स्थान पर दागा जाता था।[106] एक निशान सरकारी चिन्ह और दूसरा मनसबदार का चिन्ह। इस नई व्यवस्था से मनसबदारों के लिए घोड़े रखना आवश्यक हो गया।

सम्राट की इच्छा व साम्राज्य की आवश्यकता के अनुसार मनसबदारों की संख्या घटती-बढ़ती रहती थी। नए मनसबदारों की नियुक्ति व पुराने मनसबदारों की मृत्यु से संख्या में परिवर्तन होता रहता था। अबुल फजल के अनुसार अकबर ने मनसब का निर्धारण 110 के नायक से 10,000 तक निश्चित किया था जिसमें 5,000 से ऊपर का मनसब शहज़ादों के लिए सुरक्षित था।[107] इसके दो अपवाद थे–मानसिंह जिन्हें 7,000 का मनसब मिला था[108] और सलीम जिसे 12,000 का मनसब दिया गया था।[109] अकबर के पश्चात इस प्रकार की कोई सीमा नहीं रही थी। जहांगीर ने शाहजहां के विद्रोह के समय परवेज का मनसब 40,000 ज़ात, 30,000 सवार कर दिया था।[110] इसी प्रकार शाहजहां ने दाराशिकोह को 60,000 ज़ात व 40,000 सवार का मनसब तथा औरंगज़ेब ने मुअज्जुम और कामवक्स को 40,000 ज़ात व 40,000 सवार का मनसब दिया था।[111]

अकबर के समय कुल मनसबदारों की संख्या 1800 मिलती है जिनमें अकबर के तीन शहजादे सम्मिलित नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि मनसबदारों के विषय में बहुत व्यवस्थित रिकार्ड नहीं रखे जाते थे क्योंकि जिन मनसबदारों की मृत्यु हो चुकी थी, उनके भी नाम सूची में मिलते हैं और बहुत से मनसबदारों के नाम सूची में मिलते भी नहीं हैं। फिर भी जहांगीर के सत्ता संभलाने के समय अकबर के मनसबदारों की सूची दी गई जो विश्वसनीय मानी जाती है तथा अकबर की मृत्यु के समय 1,000 से 5,000 के बीच मनसबदारों की संख्या 301 थी तथा 10 से 500 के बीच मनसबदारों की संख्या 2840 थी।[112]

अकबर के पश्चात मनसबों के आकारों व मनसबदारों की संख्या में अधिक उतार-चढ़ाव आए। जहांगीर के शासन काल में 1000 से ऊपर के

मनसबदारों की संख्या 302 तथा 500 से ऊपर के मनसबदारों की संख्या 438 थी जिनमें 6000 के सात तथा 5000 के 50 मनसबदार थे।[113] शाहजहां के शासन काल में 7000 के 9 मनसबदार, 6000 के 7,5000 के 32,4000 के 31,3000 के 57,2500 के 24,2000 के 68,1500 के 72,1000 के 57 और 500 के 80 मनसबदार थे।[114] इसी प्रकार औरंगज़ेब के शासन काल के विषय में विभिन्न आंकड़े प्राप्त हैं। 1658 से 78 के मध्य 1000 जात से अधिक के 486 मनसबदार थे। इसमें 7000 के 6,6000 के 12,5000 के 33,4000 से 3000 के 91 तथा 3000 के नीचे 344 मनसबदार थे जबकि 1678 से 1707 के मध्य 1000 के ऊपर के मनसबदारों की संख्या 575 हो गई थी जिनमें 7000 के 17,6000 के 18,5000 के 44 और 4500-3000 के मध्य के 132 मनसबदार थे। इस प्रकार अकबर से औरंगजेब तक मनसबदारी व्यवस्था का आकार पूर्णतः परिवर्तित हो चुका था।[115]

मनसबदारों को उपाधियां भी प्रदान की जाती थीं जैसे राव, महाराजा, मिर्ज़ा राजा इत्यादि। मानसिंह और जयसिंह को क्रमशः अकबर और शाहजहां ने मिर्ज़ाराजा की उपाधि से विभूषित किया था जबकि जहांगीर ने 3000 से ऊपर के सब मनसबदारों को 'नक्काश निशान' दिए जाने का आदेश दिया था। 'तगनतोग' का सम्मान अधिकांशतः शहज़ादों को ही मिलता था किंतु शाहजहां ने इसे 7000 से ऊपर के मनसबदारों को भी दिया। इसी प्रकार बूंदी के शासक राव रतन को रामराज की उपाधि से विभूषित किया गया।[116]

इस प्रकार मनसबदारी व्यवस्था मुगल राज्यतंत्र में प्रशासन और सेना के संगठन का मुख्य आधार थी। सम्राट के अतिरिक्त शासन के सभी उच्च तथा अर्धउच्च कर्मचारियों को मनसब प्राप्त था। मनसब देना सम्राट का विशेषाधिकार था। किसी महिला को मनसब प्राप्त नहीं था। मनसब वंशानुगत नहीं होता था

केवल राजपूत वंश इसका अपवाद थे। मनसबदार की मृत्यु के पश्चात उसकी संपत्ति साम्राज्य द्वारा अधिकृत कर ली जाती थी। प्रत्येक नया मुगल शासक गद्दी पर बैठते ही पूर्व शासक के मनसबदारों को पुनः स्वीकृति दे देता था।

मनसबदार सम्राट के प्रति स्वामिभक्त रहते थे। उनका अस्तित्व तथा पदोन्नति उनकी स्वामिभक्ति तथा परिश्रम पर ही निर्भर थी। मनसबदारों का रहन सहन उच्च स्तर का होता था। साथ ही वे कला और साहित्य के पोषक भी थे परंतु सैनिकों को उचित समय पर वेतन नहीं देते थे। सैनिकों की शिकायतें मिलने पर सम्राट को नियम परिवर्तित करने पड़ते थे।

सम्राट मनसबदारों के महत्व को समझते थे। सैनिकों की भर्ती व रख-रखाव का उत्तरदायित्व मनसबदारों को दे देने से सम्राट का कार्य कुछ हल्का अवश्य हो जाता था।

ऐसा नहीं है कि मनसबदारी व्यवस्था में केवल गुण ही थे और दोष नहीं थे। मनसबदारों द्वारा भर्ती किए सैनिक उन्हीं के प्रति स्वामिभक्त रहते थे। भिन्न-भिन्न मनसबदारों की सेनाओं के अनुशासन तथा साज-सामान में भी अंतर था और उनमें परस्पर वैमनस्य भी आ जाता था जो सेना को दुर्बल बना देता था।

द्वितीयतः मनसबदार पूर्णतः सैनिक अधिकारी नहीं होते थे। अतः सम्राट उन्हें सैनिक अभियानों से नागरिक प्रशासन और प्रशासनिक उत्तरदायित्व से सैनिक अभियानों में अचानक भेज देते थे। परंतु प्रत्येक व्यक्ति में सैनिक तथा नागरिक दोनों प्रकार के कार्य करने की समान क्षमता नहीं होती। यही कारण है कि जब बीरबल और टोडरमल को अचानक सैनिक अभियानों में भेजा गया तो वे वहां सफल नहीं हो सकें।

मुग़ल काल में कुलीन वर्ग के निर्माण का एक प्रमुख माध्यम मनसबदारी व्यवस्था थी। अकबर के समय से ही कुलीन वर्ग के लिए मनसब का स्वामी होना अनिवार्य था।

मनसबदारी व्यवस्था के विकास ओर उसमें राजपूत शासकों को समन्वित करके मुग़लों ने अपने एक प्रबल प्रतियोगी व विरोधी वर्ग को भी शांति कर दिया था। मुगल शासकों ने मनसबदारी व्यवसथा के द्वारा राजपूत राजाओं से करद संबंध (Tributary relationship) स्थापित किए और इस प्रकार प्रशासनिक व्यय वहन किए बिना ही उनसे राजस्व तथा सैन्य सहायता दोनों ही

प्राप्त की। राजपूत राजाओं की गद्दी की मान्यता का अधिकार मुग़ल शासकों द्वारा अपने हाथ में रखने के कारण मुगल शासकों ने राजपूतों पर पूर्ण नियंत्रण स्थापित कर लिया क्योंकि इस अधिकार के अधीन वे उस वंश के किसी भी व्यक्ति को उत्तराधिकारी के रूप में मान्यता दे सकते थे और राजपूत शासक उनकी अनुकंपा प्राप्त करने के प्रयास में लगे रहते थे। साथ ही इन संबंधों ने कालांतर में समेकित शासक वर्ग (Composite Ruling Class) की महत्वपूर्ण प्रक्रिया को जन्म दिया। माइकल पियर्सन और पीटर हार्डी के अनुसार मुग़ल साम्राज्य में मनसबदार थे जिनकी वफादारी बादशाह के प्रति थी और उनकी वफादारी ने ही साम्राज्य को वास्तविकता प्रदान की।[117] इसी प्रकार जे.एफ. रिचर्ड्स के अनुसार मनसबदारी व्यवस्था के माध्यम से अकबर ने न केवल उच्च वर्ग में व्याप्त कुल परंपरागत और गुटबंदी से जुड़े हितों के बीच सामान्य संतुलन स्थापित किया अपितु उनको एक नई व्यक्तिगत व सामूहिक पहचान प्रदान की : एक सैनिक नायक व साम्राज्य के प्रशासक की पहचान और यही उसकी सफलता का रहस्य था।[118] इस नए वर्ग के सदस्यों, सेनानायकों व प्रशासकों, को उनका स्तर और अभिप्रेरणा साम्राज्य में उनकी भागीदारी से प्राप्त होती थी, न कि उनके वंशक्रम, समुदाय की अस्मिता अथवा व्यक्तिगत उपलब्धियों के परिणामस्वरूप, अतः उनका अस्तित्व भी साम्राज्य के अस्तित्व से जुड़ गया था।[119] इस प्रकार मनसबदारी व्यवस्था के माध्यम से मुग़ल राज्य को एक स्वामिभक्त कुलीन वर्ग (nobility) की प्राप्ति भी हुई।

वस्तुतः मनसबदारी व्यवस्था ने मुग़ल साम्राज्य को स्थिरता, अखंडता व प्रशासनिक कुशलता प्रदान की। इस व्यवस्था के माध्यम से अकबर ने अधिकांश राजपूत राजाओं का निरंतर समर्थन प्राप्त किया। उनकी वीरता और स्वामिभक्ति

मुग़ल साम्राज्य की शक्ति बन गई। राजस्थान के राजाओं को मनसबदार बनाने में अकबर को विशेष लाभ यह रहा कि वे मनसबदार अपने मनसब के अनुसार निर्धारित संख्या में सेना तो रखते ही थे, उनकी अपनी निजी सेना भी होती थी जिसकी सेवा आवश्यकता पड़ने पर अकबर को प्राप्त हो जाती थी। इस प्रकार ये मनसबदार मुगल साम्राज्य के सुरक्षा-कवच बन गए थे। परंतु दूसरी ओर मनसबदारों व उनकी सेना के निर्वाह पर होने वाले व्यय ने कृषकों व कृषि उत्पादन की स्थिति शोचनीय बना दी। परिणामस्वरूप कृषकों के विद्रोह भी बढ़े।[120]

जहांगीर और शाहजहां के समय तक मनसबदारी व्यवस्था अकबरकालीन शैली में थोड़े बहुत परिवर्तनों के साथ व्यवास्थित रूप में चलती रही किंतु औरंगज़ेब के समय उसमें बिखराव आने लगा था। तत्पश्चात बादशाहों की शक्ति क्षीण होने के साथ ही मनसबदारी व्यवस्था भी समाप्त प्रायः हो गई। सत्रहवीं शताब्दी में मनसबदारी व्यवस्था के विषय में कोई उल्लेखनीय अध्ययन भी नहीं मिलता है। निष्कर्षतः यह अवश्य कहा जा सकता है कि मुग़ल साम्राज्य के विस्तार व सुरक्षा में मनसबदारों की प्रमुख भूमिका रही किंतु यह भी कहना असत्य नही होगा कि उनके कारण राज्य के राजस्व का भारी स्राव (drain) हुआ क्योंकि मनसबदारों की आय प्रचूर मात्रा में थी तथा राजस्व का एक बड़ा भाग सशस्त्र सेनाओं की व्यवस्था पर व्यय किया जाता था। इस प्रकार इस व्यवस्था ने एक ओर तो मुग़ल साम्राज्य के विस्तृत क्षेत्रों को व्यवस्था के सूत्र में बांधे रखा तथा व्यापार और वाणिज्य की वृद्धि के लिए वातावरण तैयार किया वहीं दूसरी ओर मनसबदारों पर होने वाले व्यय के लिए कृषि उत्पाद पर अधिकाधिक राजस्व की वसूली की गई जिसके कारण कृषकों के पास कृषि का विस्तार अथवा उन्नति के लिए साधनों का अभाव रहा।

—X—